सोशल मीडिया और अस्मिता प्रबंधन

जगदीश्वर चतुर्वेदी

सोशल मीडिया और अस्मिता प्रबंधन

जगदीश्वर चतुर्वेदी

प्रकाशक: नॉटनल

प्रकाशन: अगस्त, 2025

© जगदीश्वर चतुर्वेदी

अनुक्रम

भूमिका	4
सोशल मीडिया और सांस्कृतिक राष्ट्रवाद	5
ब्लॉग लेखन का सुख और संभावनाएं	40
सोशल मीडिया के डिजिटल संस्कार	89
माओवाद, आधुनिकतावाद और हिंसाचार	106
मानवाधिकार के ग्लोबल पैराडाइम के अंतर्विरोध	121
अस्मिता, वर्चस्व और अमेरिकी जेल व्यवस्था	142
विकीलीक और अमेरिकी साम्राज्यवाद	167
डिजिटल कैपीटलिज़्म की लाक्षणिक विशेषताएं	212
फ़ेसबुक और मीडिया का सांस्कृतिक परिवेश	241
फ़ेसबुक और अभिव्यक्ति की लक्ष्मणरेखा	258
अवचेतन का ड्रामा है फ़ेसबुक	268
फ़ेसबुक माने सामाजिक निजता का अंत	290
सोशल मीडिया क्रांति और संस्कृति	332
नाइन इलेवन, अमेरिकी इमेज और वर्चुअल संस्कृति	346
वर्चुअल रियलिटी : जरोन लेनियर के परिप्रेक्ष्य में	360

वर्चुअल इतिहास के बौने प्रयोग 400

असुंदर समाज में सुंदरता की खोज है वर्चुअल रियलिटी 408

कंप्यूटर और वीडियो गेम की सैद्धांतिकी 432

भूमिका

नया दौर डिजिटल संस्कृति और कम्युनिकेशन का है। इस दौर में फेसबुक, ट्विटर, यूट्यूब आदि सबसे बड़े मीडियम के रूप में सामने आए हैं। प्रस्तुत पुस्तक में मानवाधिकार के परिप्रेक्ष्य में सोशल मीडिया की मीडिया जगत लाक्षणिक विशेषताओं का विश्लेषण किया गया है। मैं चूँकि लंबे समय तक फेसबुक पर रहता हूँ और निरंतर लिखता रहता हूँ, इसलिए इन लेखों में निजी अनुभव और सोशल मीडिया के शास्त्र की अंतक्रियाएं साथ-साथ नज़र आयेंगी। यह किताब सोशल मीडिया को समझने में मददगार साबित हो सकती है।

जगदीश्वर चतुर्वेदी

सोशल मीडिया और सांस्कृतिक राष्ट्रवाद

सोशल मीडिया ने माध्यमों की दुनिया बदल दी है। साथ सभी किस्म की राजनीतिक, सांस्कृतिक और आर्थिक संरचनाओं को गहरे तक प्रभावित किया है। सोशल मीडिया के अनेक रूप प्रचलन में हैं, जैसे- फ़ेसबुक, ब्लॉगिंग, जी प्लस, ट्विटर आदि। सोशल मीडिया में 'सोशल' पदबंध बहुत ही महत्वपूर्ण है। यह सामाजिक से भिन्न है। समाजविज्ञान से लेकर लेकर परंपरागत विमर्श के विभिन्न क्षेत्रों में 18वीं शताब्दी के बाद से लेकर आज तक जिसे सामाजिक कहते रहे हैं उससे इस 'सोशल' का कोई लेना-देना नहीं है। सवाल यह है 'सोशल' को कैसे परिभाषित करें। 'सोशल' के कई रूप हैं। राजनीतिक संप्रेषण से लेकर मार्केटिंग तक इसके वैविध्यपूर्ण रूप नज़र आते हैं। सोशल मीडिया में जो 'सोशल' है वह सामाजिक ज़िम्मेदारी के विचारों से भागा हुआ यूज़र है। सोशल नेटवर्क में सामाजिक ज़िम्मेदारी का भाव कम है, हमें सामाजिक विकास के लिए ऐसे विकल्प चाहिए जो सामाजिक ज़िम्मेदारी निभाएं। सामाजिक ज़िम्मेदारी निभाने के लिए 'भरोसेमंद' और 'विश्वसनीय' नेटवर्क की ज़रूरत है। हमें आज और सोशलाइज़ेशन की ज़रूरत नहीं है बल्कि भरोसेमंद और विश्वसनीय लोगों के नेटवर्क की ज़रूरत है, क्योंकि सोशल मीडिया में बहुत कुछ ऐसा कंटेंट है, कम्युनिकेशन है जो भरोसे लायक नहीं है, समाज के लिए हितकारी नहीं है।

दिलचस्प बात है कि हममें से कोई भीड़ का अंग बनना नहीं चाहता, 'भीड़' में बोलना नहीं चाहता। लेकिन सोशल मीडिया में तो सबकुछ 'मास' है, 'भीड़' है। सोशल मीडिया में ज्योंही दाख़िल होते हैं 'भीड़' का अंग बन जाते हैं। सोशल मीडिया में 'मास' ही शक्ति है। भीड़ ही ताकतवर है।

ज्यां बौद्रिलार्द के शब्दों में कहें तो 'सोशल' का यथार्थ में रूपान्तरण 'सामाजिक' के रूप में नहीं होता। वह खोखला है। जिसे हम 'मास' कहते हैं वह खोखला पदबंध है। यह एक तरह से क्रिस्टल वॉल की तरह है। बौद्विलार्द ने 'मास' को 'बहुसंख्यक' के रूप में देखा है। 'मासेज' से की गयी अपील का कोई प्रत्युत्तर नहीं मिलता। 'मासेज' पदबंध में राज्य, इतिहास, संस्कृति आदि सभी विचार हजम हो जाते हैं। 'मासेज' हमारी आधुनिकता का सबसे विस्फ़ाटक फ़िनोमिना है। इसमें आप किसी भी किस्म की परंपरागत थ्योरी और अभ्यासों को समाहित नहीं कर सकते। 'मासेज' के दो रूप मिलते हैं, पहला, स्वतः स्फूर्त, दूसरा पेसिव। लेकिन यह हमेशा संभावित ऊर्जा से भरी रहता है। आज वे चुप हैं लेकिन कल वे जब बोलेंगे तो 'साइलेंट मेजोरिटी' कहे जाएंगे। इतिहास में 'मासेज' का कोई इतिहास नहीं होता। उनका कोई अतीत और भविष्य भी नहीं होता। उनके पास कोई वर्चुअल एनर्जी भी नहीं होती जिसे वे रिलीज़ कर सकें। लेकिन उसमें हजम करने या तटस्थ करने की क्षमता होती है।

बौद्रिलार्द का मानना है 'मास' या 'भीड़' कोई अवधारणा नहीं है। बल्कि राजनीतिक भाषणकला का अंग है। यह हल्का, रूढ़ और लुंपन पदबंध है। प्रत्येक खोखले वक्ता के पास अनुगामी गूंगा समूह होता है । जिसकी कोई निजी राय नहीं होती । वह सभी किस्म के विमर्शों में सारहीन रूप में भाग लेता है । 'भीड़' का अर्थ है 'सोशल' का पूरी तरह सफ़ाया । 'भीड़' के प्रसंग में 'भक्त' और 'भगवान' की इमेज को नए सिरे से पढ़ने की ज़रूरत है। इन दोनों की इमेज में कोई अर्थ संप्रसारित नहीं होता । कोई विचार संप्रसारित नहीं होता । 'भक्त' कभी भगवान के विचार से प्रभावित नहीं होते । ज्योंही 'भगवान' की याद आती है पुजारी याद आता है। उस समय आप न तो पाप पर ग़ुस्सा होते हैं और न व्यक्तिगत मुक्ति के सवालों पर ग़ुस्सा होते हैं। मंदिरों और तीर्थों में संस्कार देखते हैं, यह रूपान्तरण की धारणा का विलोम है । वे अंततः भक्त हैं, वे छोटी छोटी इमेजों के ज़रिए ज़िन्दा रहते हैं । वे इमेजों में किए गए छोटे छोटे बदलावों और अंधविश्वासों के ज़रिए ज़िंदा रहते हैं । इसके क्रम में वे पतनशील संस्कारों को बनाए रखते हैं। आध्यात्मिक आस्था के भिखारी के रूप में बचे रहते हैं । वे आस्था के लिए मरना नहीं चाहते। वे रूपान्तरित भी होना नहीं चाहते। उनकी अनिश्चितता, अविश्वास, भेदभाव और इंतज़ार कभी ख़त्म नहीं होता । वे हर चीज़ से पलायन करते हैं और यही चीज़ उनको धर्म से जोड़े रखती है । मासेज के लिए भगवान सब समय हैं और हर जगह हैं । उनकी अनंत इमेज हैं। उन अनंत इमेजों को हम मूर्तियों